



Neutral Citation No. - 2026:AHC:11472-DB

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

रिट - बी संख्या - 5318 सन् 2025

प्रेम सिंह

... याचिकाकर्ता (गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं 5 अन्य

..विपक्षी पक्षकार(गण)

आवेदक(गण) के अधिवक्ता

:- विशाल खंडेलवाल

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता

:- अजय कुमार मालवीय, अविनाश चंद्र श्रीवास्तव,
सी.एस.सी., राजेश कुमार सिंह

प्रकाशनार्थ अनुमोदित

न्यायालय संख्या -55

माननीय न्यायमूर्ति सिद्धार्थ नंदन

1. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विशाल खंडेलवाल, प्रतिवादी संख्या 1 से 4 की ओर से विद्वान स्थायी अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 5 की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री अविनाश चंद्र श्रीवास्तव तथा प्रतिवादी संख्या 6 की ओर विद्वान अधिवक्ता श्री अजय कुमार मालवीय, को सुना ।

2. चूँकि इसमें शामिल प्रश्न विशुद्ध रूप से विधिक प्रकृति का है, इसलिए पक्षकारों की सहमति से वर्तमान रिट याचिका को अंगीकृत किए जाने के चरण पर ही निस्तारित किया जा रहा है।

तथ्य:-

3. याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पुनरीक्षण संख्या 86 वर्ष 2023 (कम्प्यूटरीकृत संख्या AG202301010086) में पारित दिनांक 4.11.2025 के आदेश को चुनौती दी है, जिसके द्वारा दिनांक 19.4.2023 के प्रत्यावर्तन (रिमांड) आदेश को अपास्त कर दिया गया है। पक्षकारों के मध्य यह स्वीकृत है कि भू-राजस्व अधिनियम, 1901 की धारा 28 के अंतर्गत कार्यवाही में

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



दिनांक 26.11.2007 को प्रतिवादी संख्या 6 के पक्ष में एक आदेश पारित किया गया था; और जिसके विरुद्ध 11 वर्षों से अधिक के पश्चात् दिनांक 26.11.2007 के आदेश को वापस बुलाए जाने हेतु राज्य द्वारा दिनांक 23.6.2018 का पुनर्स्थापना आवेदन दाखिल किया गया था और इसी प्रकार याचिकाकर्ता द्वारा भी उसी दिनांक 26.11.2007 के आदेश को वापस बुलाने के लिए दिनांक 15.6.2018 का पुनर्स्थापना आवेदन दाखिल किया गया था, जिसे प्रारंभ में दिनांक 29.1.2020 के आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था, किंतु तत्पश्चात् दिनांक 19.4.2023 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण स्वीकार कर लिया गया और विषय को पुनर्स्थापना आवेदन पर नए सिरे से निर्णय के लिए वापस प्रेषित किया गया। प्रतिवादी संख्या 6 द्वारा इसी दिनांक 19.4.2023 के आदेश के विरुद्ध राजस्व परिषद के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया गया और दिनांक 4.11.2025 के आदेश द्वारा उक्त पुनरीक्षण स्वीकार कर लिया गया है, जो वर्तमान रिट याचिका में आक्षेपित है।

तर्क:-

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि नायब तहसीलदार द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट केवल प्लॉट संख्या 25 के संबंध में थी और प्लॉट संख्या 75 के संदर्भ में कोई माप नहीं की गई थी, जो स्वीकृत रूप से प्रतिवादी संख्या 6 की है और उनके दावे के अनुसार; और जिसे प्लॉट संख्या 75 के क्षेत्र के एक भाग को प्लॉट संख्या 25 में विलय करके घटाया गया था। उन्होंने हमारा ध्यान उक्त रिपोर्ट की ओर इस कथन के साथ आकर्षित किया कि प्लॉट संख्या 25 का क्षेत्रफल 0.553 हेक्टेयर पाया गया और वही अपरिवर्तित रहा, किंतु फिर भी दिनांक 26.11.2007 के आदेश द्वारा प्लॉट संख्या 25 का क्षेत्र प्लॉट संख्या 75 में विलय कर दिया गया, जिससे प्रतिवादी संख्या 6 को अनुचित लाभ प्राप्त हुआ।

5. इसके विपरीत श्री अजय कुमार माल्विया, प्रतिवादी संख्या 6 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि दिनांक 20.9.2007 की रिपोर्ट (अनुलग्नक-3) स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि प्लॉट संख्या 75 का एक क्षेत्र निकालकर प्लॉट संख्या 25 में विलय किया गया था और यह भी कि दिनांक 26.11.2007 का आदेश राज्य को सुनने के पश्चात् और दिनांक 20.9.2007 की रिपोर्ट के आधार पर पारित किया गया था; और याचिकाकर्ता के अनुरोध पर उसे पुनः उठाया नहीं जा सकता, क्योंकि वर्तमान याचिका जनहित याचिका की प्रकृति की नहीं है, अतः याचिकाकर्ता को उक्त कार्यवाही को चुनौती देने का कोई वाद-हेतुक नहीं है। उन्होंने आगे प्रस्तुत

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



किया है कि याचिकाकर्ता और प्रतिवादी संख्या 6 के मध्य विभिन्न आपराधिक मामले विचाराधीन हैं, जिनका विवरण नीचे दिया गया है:-

(i) धारा 482 के अंतर्गत आवेदन संख्या 40621 वर्ष 2022, प्रेम प्रताप सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (सत्र परीक्षण संख्या 664 वर्ष 2018 (राज्य बनाम जगवीर एवं अन्य), प्रकरण अपराध संख्या 863/2018 से उत्पन्न, धारा 308, 506 भा.द.वि., थाना- नया आगरा, जिला- आगरा)

(ii) धारा 482 के अंतर्गत आवेदन संख्या 4558 वर्ष 2024, प्रेम सिंह एवं 6 अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (सत्र परीक्षण संख्या 1077 वर्ष 2023, परिवाद प्रकरण संख्या 136 वर्ष 2022 (रंजीत सिंह बनाम प्रेम सिंह एवं अन्य) से उत्पन्न, धारा 395 भा.द.वि., थाना ताजगंज, जिला-आगरा, विशेष न्यायाधीश (डी.ए.ए.)/अपर सत्र न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 13, आगरा के न्यायालय में विचाराधीन।)

(iii) आपराधिक प्रकीर्ण जमानत आवेदन संख्या 42140 वर्ष 2023, प्रेम सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (सत्र परीक्षण संख्या 1077 वर्ष 2023, धारा 395 भा.द.वि., थाना ताजगंज, जिला आगरा)

6. उत्तर में याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने इस न्यायालय के **सूरजदेव बनाम राजस्व परिषद, उ.प्र. इलाहाबाद एवं अन्य (एआईआर 1982 इलाहाबाद 23)** में दिए गए निर्णय पर निर्भरता रखते हुए प्रस्तुत किया है कि एक तृतीय पक्ष भी संबंधित न्यायालयों के संज्ञान में सही तथ्य ला सकता है और संबंधित न्यायालय प्राप्त सूचना पर कार्रवाई करने में पूर्णतः न्यायसंगत होंगे। उन्होंने उक्त निर्णय के पैरा 14 एवं 18 पर निर्भरता रखी है, जो नीचे उद्धृत है:-

"14. निःसंदेह उपर्युक्त प्रकरण में की गई टिप्पणियाँ, प्रतिद्वंद्वी विपरीत पक्षकारों की ओर से उठाए गए तर्क का समर्थन करती हैं। मेरे मत में, विद्वान सदस्य द्वारा की गई टिप्पणियाँ अत्यंत विस्तृत हैं और उन्हें पूर्णतः सही विधि के प्रतिपादन के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। ऐसे मामले हो सकते हैं जहाँ एक तृतीय पक्ष संबंधित न्यायालयों के संज्ञान में सही तथ्य ला सकता है और संबंधित न्यायालय प्राप्त सूचना पर कार्रवाई करने और सी.पी.सी. की धारा 151 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करने में पूर्णतः न्यायसंगत होंगे। वर्तमान मामले में मेरा मत है कि याचिकाकर्ता विचारण न्यायालय के संज्ञान में सही तथ्य लाने में पूर्णतः न्यायसंगत था, जिसने प्राप्त सूचना

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



पर उचित रूप से कार्यवाही की और प्रतिद्वंद्वी विपरीत पक्षकारों के पक्ष में एकपक्षीय डिक्रियाँ को उचित रूप से अपास्त किया।

18. दिनांक 10.6.1969 को विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के अवलोकन से ज्ञात होता है कि विचारण न्यायालय ने इस आधार पर एकपक्षीय डिक्रियाँ अपास्त की हैं कि न्यायालय के साथ धोखाधड़ी की गई थी और उप-प्रभाग के प्रभारी सहायक कलेक्टर की विवादित भूमि को प्रतिद्वंद्वी विपरीत पक्षकारों को सीरदार के रूप में आवंटित करने की कोई पूर्व स्वीकृति नहीं थी। मेरे मत में, विचारण न्यायालय ने प्रतिद्वंद्वी विपरीत पक्षकारों के पक्ष में एकपक्षीय डिक्रियाँ इस आधार पर अपास्त की हैं कि उक्त एकपक्षीय डिक्रियाँ विधि के प्रावधानों पर ध्यान दिए बिना पारित की गई थीं, अतः न्यायालय ने प्रतिद्वंद्वी विपरीत पक्षकारों के पक्ष में एकपक्षीय डिक्रियाँ पारित करने में विधि की त्रुटि की थी जो रद्द किए जाने योग्य थीं और दिनांक 10.3.1969 के आदेश द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा उचित रूप से अपास्त की गईं। इस प्रकार दिनांक 7.9.1962 को विचारण न्यायालय द्वारा प्रतिद्वंद्वी विपरीत पक्षकारों के पक्ष में एकपक्षीय डिक्रियाँ पारित करने में की गई गलती को विचारण न्यायालय द्वारा अपने बाद के दिनांक 10.6.1969 के आदेश द्वारा सुधारा गया है।"

7. उन्होंने इस न्यायालय के विनय कुमार चौधरी बनाम घनश्याम नारायण कोहली (2001 (92) आरडी 453) में दिए गए निर्णय पर भी निर्भरता रखी है, यह प्रस्तुत करने के लिए कि विलंब क्षमा के लिए आवेदन ऐसे व्यक्ति द्वारा दाखिल किया जा सकता है जो कार्यवाही में पक्षकार नहीं है, केवल इस कथन के साथ कि उसने आदेश की जानकारी होने पर आदेश को वापस बुलाने के लिए आवेदन किया है और इस प्रकार उसे विलंब का स्पष्टीकरण देना आवश्यक नहीं है। उन्होंने उक्त निर्णय के पैरा 6 एवं 7 पर निर्भरता रखी है, जो नीचे उद्धृत है:-

"6. आदेश में हस्तक्षेप न करने का एक अन्य कारण यह है कि इस मामले में विलंब क्षमा के लिए आवेदन केवल एक औपचारिकता थी, जो कि आवश्यक ही नहीं थी। विपरीत पक्षकार जिसने आवेदन दाखिल किया, वह कार्यवाही में पक्षकार नहीं था और उसने आदेश की जानकारी होने पर आदेश को वापस बुलाने के लिए आवेदन दाखिल किया। इसलिए, उसे विलंब का स्पष्टीकरण देना आवश्यक नहीं था। एकमात्र आवश्यकता यह थी कि यह दर्शाया जाए कि उसे आदेश की जानकारी कब हुई। अतः विचार का

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



मुख्य प्रश्न आदेश को वापस बुलाने के आधार के संबंध में था। इसलिए, पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का प्रथम तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता।

7. यह भी तर्क दिया गया है कि आदेश 9 नियम 13 सी.पी.सी. वर्तमान मामले में लागू नहीं होता। यह तर्क दिया गया है कि विपरीत पक्षकार कार्यवाही में पक्षकार नहीं था, इसलिए वह आदेश 9, नियम 13 सी.पी.सी. के प्रावधानों का सहारा नहीं ले सकता और उसका आवेदन पोषणीय नहीं था। यह भी तर्क दिया गया है कि कार्यवाही प्रकीर्ण कार्यवाही है और इसलिए आदेश 9, नियम 13 सी.पी.सी. के प्रावधान लागू नहीं होते।"

तथ्यात्मक विवेचना/निष्कर्ष:-

8. दिनांक 15.6.2018 का आवेदन इंगित करता है कि याचिकाकर्ता को दिनांक 26.11.2007 के आदेश की जानकारी ग्राम पंचायत के प्रधान से दिनांक 4.6.2018 को हुई थी और तदनुसार उसने पुनर्स्थापना आवेदन दाखिल किया। इसी प्रकार, राज्य द्वारा दाखिल दिनांक 23.6.2018 के पुनर्स्थापना आवेदन में भी यह कथन है कि जब दिनांक 18.6.2018 को एक शिकायत की गई और अभिलेखों की जाँच की गई, तब राज्य को भी दिनांक 26.11.2007 के आदेश की जानकारी हुई।

9. प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने इस चरण पर आग्रह किया है कि भूमि की प्रकृति एक सड़क की है और प्रतिवादी संख्या 6 दिनांक 26.11.2007 के आदेश द्वारा उसे अनुज्ञात क्षेत्र पर अपने अधिकार का प्रयोग कर रहा था और तदनुसार, केवल यह कहकर कि उन्हें वर्ष 2018 में अर्थात् 11 वर्षों के पश्चात् जानकारी हुई, पुनर्स्थापना आवेदन दाखिल करने के लिए स्वीकार्य स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। **सुरजदेव (उपरोक्त)** के मामले में दिए गए निर्णय के संबंध में, वह एकपक्षीय डिक्ली से संबंधित है और धोखाधड़ी के आधार पर उसे चुनौती दी गई थी, जो वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता। **विनय कुमार चौधरी (उपरोक्त)** के मामले में दिया गया निर्णय भी विलंब क्षमा आवेदन में दिए गए कारणों अर्थात् जानकारी की तिथि से संबंधित है, जो अन्यथा विलंब का स्पष्टीकरण न देने के लिए स्वीकार्य स्पष्टीकरण है। तथापि, वर्तमान मामले के तथ्यों में जानकारी की तिथि संबंधी कथन स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि प्लॉट संख्या 25 की प्रकृति 'सड़क' की है और दिनांक 26.11.2007 के आदेश के पश्चात् से प्रतिवादी संख्या 6 उस पर अपने अधिकारों का प्रयोग कर रहा था, इसलिए यह सार्वजनिक जानकारी होती; और पक्षकारों के मध्य आपराधिक मामलों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



सकता। इसलिए **विनय कुमार चौधरी (उपरोक्त)** मामले का अनुपात भी वर्तमान मामले में लागू नहीं होता।

10. यह न्यायालय इस तथ्य का भी संज्ञान लेता है कि वादकारियों के मध्य यह बढ़ती प्रवृत्ति हो गई है कि कुछ लेन-देन करने के लिए पक्षकार पुराने निस्तारित विवादों को फिर से खोलने की ओर प्रवृत्त होते हैं, ताकि दूसरे पक्ष को परेशान किया जा सके। तथापि, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि यदि कोई "पर्याप्त कारण" हो और उचित परिश्रम के बावजूद जानकारी के अभाव में किसी उपाय का प्रयोग छूट गया हो, तो विलंब के लिए पर्याप्त स्पष्टीकरण देकर पक्षकारों को अपने उस उपाय का प्रयोग करने से रोका नहीं जा सकता, जो किसी कार्यवाही के संबंध में अन्यथा उपलब्ध है।

11. सर्वोच्च न्यायालय ने परिसीमा विधि पर विचार करते हुए, **यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम जहाँगीर बेरामजी जीजीभाँय (मृतक) उनके विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से (एआईआर 2024 एससी 1884)** के मामले में हाल ही में यह अनुपात पुनः पुष्ट किया है कि 'परिसीमा के नियम' सुदृढ़ सार्वजनिक नीति और न्यायसंगतता के सिद्धांतों पर आधारित हैं और यह ध्यान में रखते हुए कि 'डैमोक्रेस की तलवार' एक पक्ष के सिर पर दूसरे पक्ष की इच्छाओं और कल्पनाओं पर निर्धारित होने के लिए, अनिश्चित काल के लिए लटकी नहीं रहनी चाहिए। यह भी विधायिका का आशय नहीं है कि 'परिसीमा के नियम' पक्षकारों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए हैं कि पक्षकार विलंबकारी युक्ति-युक्तियों का सहारा न लें, बल्कि तत्काल अपना उपाय खोजें।

12. सर्वोच्च न्यायालय ने **एन. बालकृष्णन बनाम एम. कृष्णमूर्ति (1998 (7) एससीसी 123)** के मामले में पैरा 11 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

"...यह सिद्धांत interest reipublicae ut sit finis litium (यह सार्वजनिक कल्याण के लिए है कि मुकदमेबाजी की एक सीमा निर्धारित की जाए) में निहित है। परिसीमा के नियम पक्षकारों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए नहीं हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए हैं कि पक्षकार विलंबकारी युक्ति-युक्तियों का सहारा न लें बल्कि तत्काल अपना उपाय खोजें। विचार यह है कि प्रत्येक विधिक उपाय को विधायी रूप से निर्धारित अवधि के लिए जीवित रखा जाए।"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



13. ईशा भट्टाचार्य बनाम प्रबंध समिति, रघुनाथपुर नगर अकादमी एवं अन्य (2013) 12

एससीसी 649) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित किए:-

"21. उपर्युक्त प्राधिकारों से, जो सिद्धांत व्यापक रूप से निकाले जा सकते हैं, वे हैं:

21.1. (i) विलंब क्षमा आवेदन का निस्तारण करते समय उदार, व्यावहारिक, न्यायोन्मुखी, अपेक्षित दृष्टिकोण होना चाहिए, क्योंकि न्यायालयों को अन्याय को वैध बनाने के लिए नहीं बल्कि अन्याय को दूर करने के लिए बाध्य किया जाता है।

21.2. (ii) 'पर्याप्त कारण' शब्दों को उचित भावना, दर्शन और उद्देश्य के साथ समझा जाना चाहिए, यह ध्यान में रखते हुए कि ये शब्द मूलतः लचीले हैं और प्राप्त तथ्यात्मक परिस्थिति पर उचित दृष्टिकोण से लागू किए जाने चाहिए।

21.3. (iii) मूल न्याय सर्वोपरि एवं केंद्रीय होने के कारण तकनीकी विचारों को अनुचित और अनावश्यक महत्व नहीं दिया जाना चाहिए।

21.4. (iv) जानबूझकर विलंब करने के लिए कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता, किंतु अधिवक्ता या वादकारी की ओर से घोर लापरवाही पर ध्यान दिया जाना है।

21.5. (v) विलंब क्षमा की अपेक्षा रखने वाले पक्षकार पर आरोपणीय सदाशयता का अभाव एक महत्वपूर्ण और प्रासंगिक तथ्य है।

21.6. (vi) यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि कड़े प्रमाण के प्रति अनुपालन सार्वजनिक न्याय को प्रभावित नहीं करना चाहिए और सार्वजनिक रूप से नुकसानदायक नहीं होना चाहिए क्योंकि न्यायालयों को सतर्क रहना आवश्यक है ताकि अंतिम परिणाम में न्याय की वास्तविक विफलता न हो।

21.7. (vii) उदार दृष्टिकोण की अवधारणा को युक्तियुक्तता की संकल्पना को समाहित करना होगा और इसे पूर्णतः अनिर्बंध स्वतंत्र प्रयोग की अनुमति नहीं दी जा सकती।

21.8. (viii) अत्यधिक विलंब और कम अवधि या कुछ दिनों के विलंब के मध्य भेद है, क्योंकि पूर्व के लिए पूर्वाग्रह का सिद्धांत आकर्षित होता है जबकि उत्तरार्द्ध के लिए नहीं। इसके अतिरिक्त, पहले के लिए कठोर दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जबकि दूसरे के लिए उदार रेखांकन की आवश्यकता होती है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



21.9. (ix) किसी पक्षकार का आचरण, व्यवहार और दृष्टिकोण उसकी निष्क्रियता या लापरवाही से संबंधित विचार किए जाने वाले प्रासंगिक कारक हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि मूलभूत सिद्धांत यह है कि न्यायालयों को दोनों पक्षकारों के संबंध में न्याय के तुला पलड़े को तौलना आवश्यक है और उक्त सिद्धांत को उदार दृष्टिकोण के नाम पर पूर्णतः नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

21.10. (x) यदि दिया गया स्पष्टीकरण गढ़ा हुआ है या आवेदन में उठाए गए आधार काल्पनिक हैं, तो न्यायालयों को सतर्क रहना चाहिए कि दूसरे पक्ष को अनावश्यक रूप से ऐसी मुकदमेबाजी का सामना न करना पड़े।

21.11. (xi) यह ध्यान में रखना होगा कि परिसीमा विधि की तकनीकीताओं का सहारा लेकर कोई भी धोखाधड़ी, मिथ्या निरूपण या अंतर्वेशन से बच नहीं सकता।

21.12. (xii) तथ्यों के संपूर्ण ताने-बाने की सावधानीपूर्वक जाँच की जानी चाहिए और दृष्टिकोण न्यायिक विवेक के प्रतिमान पर आधारित होना चाहिए जो वस्तुनिष्ठ तर्क पर आधारित है न कि व्यक्तिगत धारणा पर।

21.13. (xiii) राज्य या सार्वजनिक निकाय या सामूहिक कारण का प्रतिनिधित्व करने वाली इकाई को कुछ स्वीकार्य छूट दी जानी चाहिए।

22. उपरोक्त सिद्धांतों में हम वर्तमान परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए कुछ और दिशानिर्देश जोड़ सकते हैं। वे हैं:

22.1. (a) विलंब क्षमा के लिए आवेदन सावधानीपूर्वक तैयार किया जाना चाहिए, न कि अव्यवस्थित तरीके से, इस धारणा को रखते हुए कि न्यायालयों को इस मूल सिद्धांत पर विलंब माफ करना आवश्यक है कि गुण-दोष के आधार पर विवाद का न्यायनिर्णयन, न्याय वितरण प्रणाली के लिए महत्वपूर्ण है।

22.2. (b) विलंब क्षमा के लिए आवेदन को व्यक्तिगत दर्शन के आधार पर, जो मूलतः व्यक्तिपरक है, एक नियमित ढंग से नहीं निपटाया जाना चाहिए।

22.3. (c) यद्यपि न्यायिक विवेक की अवधारणा को ध्यान में रखते हुए कोई सटीक सूत्र नहीं बनाया जा सकता, तथापि न्यायनिर्णायक प्रणाली की संगति और



कॉलेजियालिटी प्राप्त करने के लिए सचेत प्रयास किया जाना चाहिए क्योंकि वह अंतिम संस्थागत आदर्श-वाक्य है।

22.4. (d) विलंब को एक गंभीर मामला न समझने और इसलिए उदासीन प्रवृत्ति को ढिलाई भरे तरीके से प्रदर्शित करने की बढ़ती प्रवृत्ति को, निश्चित रूप से विधिक मानदंडों के भीतर, नियंत्रित किया जाना आवश्यक है।"

मुद्दे:-

14. उपरोक्त व्यापक सिद्धांतों से, यद्यपि वे संपूर्ण नहीं हैं, यह न्यायालय पाता है कि वर्तमान मामले के तथ्यों में निर्धारित किए जाने वाले प्रश्न हैं:

(i) क्या विलंब क्षमा की अपेक्षा रखने वाले पक्षकारों पर सदाशयता का अभाव आरोपणीय था;

और

(ii) क्या वर्तमान तथ्यों में अत्यधिक विलंब के कारण पूर्वाग्रह का सिद्धांत आकर्षित होता है या नहीं; और

(iii) क्या किसी पक्षकार का आचरण, व्यवहार और दृष्टिकोण जो उसकी निष्क्रियता या लापरवाही की ओर ले जाता है, एक आरोपणीय कारक हो सकता है और उदार दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि में पक्षकारों के मध्य न्याय का संतुलन, विलंब क्षमा के लिए स्वीकार्य कारक हो सकता है?

मुद्दा संख्या 1

15. वर्तमान मामले के स्वीकृत तथ्य यह हैं कि संहिता, 2006 की धारा 28 के अंतर्गत कार्यवाही में दिनांक 26.11.2007 को ही प्रतिवादी संख्या 6 के पक्ष में आदेश पारित किया गया था; और यह वर्ष 2018 में ही है कि स्मरण आवेदन दाखिल किए गए हैं, जिसमें एकमात्र स्पष्टीकरण यह है कि याचिकाकर्ता के साथ-साथ राज्य के लिए जानकारी की तिथि जून, 2018 में थी और तदनुपरांत दिनांक 23.6.2018 और 15.6.2018 के स्मरण आवेदन दाखिल किए गए हैं। यह भी पक्षकारों के मध्य विवादित नहीं है कि प्लॉट संख्या 25 'सड़क' की प्रकृति का है जो ग्राम में सार्वजनिक रूप से जन-सामान्य द्वारा उपयोग की जा रही है।

16. प्रतिवादी संख्या 6 का एक विशिष्ट मामला है कि वह दिनांक 26.11.2007 के आदेश के पारित होने के शीघ्र पश्चात् ही प्लॉट संख्या 75 में विलय हुए क्षेत्र का उपयोग कर रहा था,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



जिसका वह भू-धारक है। उक्त तथ्यात्मक स्थिति में, यह नजरअंदाज नहीं किया जा सकता कि प्लॉट संख्या 25 पर जो सड़क है, उसका घटा हुआ क्षेत्र, दिनांक 26.11.2007 के आदेश के पारित होने के शीघ्र पश्चात् स्पष्ट और ग्रामीणों के लिए स्वीकार्य कारक रहा होगा।

17. अतः उपरोक्त स्वीकृत तथ्यों में, यह युक्तिसंगत रूप से नहीं माना जा सकता कि याचिकाकर्ता उस क्षेत्र से अनभिज्ञ था जो घटाया गया था; और इस प्रकार "interest reipublicae ut sit finis litium" (यह सार्वजनिक कल्याण के लिए है कि मुकदमेबाजी की एक सीमा निर्धारित की जाए) का सूत्र आकर्षित होता है, और एल्वेनकाइंड का आवरण, एक "पर्याप्त कारण" के बिना, विलंबित आवेदन को युक्तिसंगत स्पष्टीकरण देने से छुपाने के लिए छद्म-आवरण के रूप में, अनुमत नहीं किया जा सकता।

18. परिसीमा अवधि का उद्देश्य यह है कि प्रत्येक विधिक उपाय विधायी रूप से निर्धारित अवधि के लिए जीवित रहे और उसके विस्तार या विलंब की क्षमा की जाँच न्यायिक रूप से की जाए और यह देखा जाए कि आवेदन में 'पर्याप्त कारण' निवेदित है या नहीं।

19. सर्वोच्च न्यायालय ने मध्य प्रदेश राज्य बनाम राम कुमार चौधरी⁶ के मामले में विलंब माफ करने के विवेक के संबंध में प्रश्न की जाँच की और अभिनिर्धारित किया कि विलंब को प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर न्यायिक रूप से प्रयोग किया जाना है और यह कि 'पर्याप्त कारण' की अभिव्यक्ति को उदारतापूर्वक व्याख्यायित नहीं किया जा सकता, यदि पक्षकार को कार्रवाई में लापरवाही या सदाशयता का अभाव आरोपित किया जाता है; और उदारता के रूप में विलंब को माफ नहीं किया जा सकता और मूल न्याय प्रदान करना विपरीत पक्षकार को पूर्वाग्रह नहीं पहुँचाना है। यूनियन ऑफ इंडिया बनाम जहाँगीर बेरामजी जी जी भॉय (मृतक) (उपरोक्त) का अनुपात भी मध्य प्रदेश राज्य बनाम राम कुमार चौधरी (उपरोक्त) में अनुमोदन के साथ उद्धृत किया गया है। इसका प्रासंगिक अंश नीचे उद्धृत है:-

"24. उपरोक्त परिस्थितियों में, हमने यह स्पष्ट कर दिया कि जब तक हम यह नहीं मान लेते कि इतने लंबे और अत्यधिक विलंब की क्षमा के लिए पर्याप्त कारण बताया गया है, तब तक हम मामले के गुण-दोष पर विचार करने वाले नहीं हैं।

25. जब विलंब की क्षमा की बात आती है तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वादकारी कोई निजी पक्षकार है या राज्य या भारत संघ है, 12 वर्षों से अधिक के घोर विलंब की क्षमा करने में। यदि वादकारी विधि के प्रासंगिक प्रावधानों के अंतर्गत निर्धारित समय की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



समाप्ति के बहुत बाद न्यायालय के पास जाना चुनता है, तो वह यह नहीं कह सकता कि विलंब की क्षमा से किसी पक्ष को कोई पूर्वाग्रह नहीं होगा। पक्षकारों के मध्य यह मुकदमेबाजी वर्ष 1981 में कभी शुरू हुई। हम 2024 में हैं। लगभग 43 वर्ष बीत चुके हैं। तथापि, आज तक प्रतिवादी अपनी डिफेंस के फल प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो सका है। यह न्याय का उपहास होगा यदि हम 12 वर्ष और 158 दिनों के विलंब को माफ कर दें और एक बार फिर प्रतिवादी को विधिक कार्यवाही के चक्करों से गुजरने के लिए कहें।

26. विलंब की अवधि एक प्रासंगिक विषय है जिसे न्यायालय को यह विचार करते समय ध्यान में रखना चाहिए कि विलंब को माफ किया जाए या नहीं। अपीलकर्ताओं के दृष्टिकोण के स्वर से, ऐसा प्रतीत होता है कि वे उन कार्यवाहियों को संस्थित करने के लिए अपनी परिसीमा की अवधि स्वयं निर्धारित करना चाहते हैं जिनके लिए विधि ने परिसीमा की अवधि निर्धारित की है। एक बार यह अभिनिर्धारित हो जाने पर कि किसी पक्षकार ने अपने लंबे समय की निष्क्रियता के कारण मामले पर गुण-दोष के आधार पर विचार करवाने का अपना अधिकार खो दिया है, यह नहीं माना जा सकता कि यह गैर-जानबूझकर विलंब है और ऐसी मामले की परिस्थितियों में, उसे यह सुनवाई नहीं दी जा सकती कि मूल न्याय को तकनीकी विचारों के मुकाबले प्राथमिकता दी जानी चाहिए। विलंब क्षमा की अपील पर विचार करते समय, न्यायालय को मुख्य विषय के गुण-दोष से शुरुआत नहीं करनी चाहिए। न्यायालय का यह कर्तव्य है कि पहले विलंब क्षमा की अपेक्षा रखने वाले पक्षकार द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण की सदाशयता का पता लगाए। केवल यदि वादकारी द्वारा बताया गया पर्याप्त कारण और दूसरे पक्ष का विरोध समान रूप से संतुलित हो, तो न्यायालय विलंब की क्षमा के प्रयोजन के लिए मामले के गुण-दोष की सहायता ले सकता है।

27. हम इस मत के हैं कि परिसीमा का प्रश्न केवल एक तकनीकी विचार नहीं है। परिसीमा के नियम सुदृढ़ सार्वजनिक नीति और न्यायसंगतता के सिद्धांतों पर आधारित हैं। हमें प्रतिवादी के सिर पर 'डैमोक्लेस की तलवार' अनिश्चित काल के लिए अपीलकर्ताओं की इच्छाओं और कल्पनाओं पर निर्भर होने के लिए लटकती नहीं रहने देनी चाहिए।

XXX XXX XXX



34. उपरोक्त के मद्देनजर, हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में कोई त्रुटि नहीं की, बल्कि विधि की कोई भी त्रुटि नहीं की। अन्यथा भी, उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत अपने पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर रहा था।

35. इस न्यायालय के बहुसंख्यक निर्णयों में कहा गया है कि विलंब को उदारता के रूप में माफ नहीं किया जाना चाहिए। मूल न्याय प्रदान करना विपरीत पक्षकार को पूर्वाग्रह नहीं पहुँचाना है। अपीलकर्ता यह सिद्ध करने में विफल रहे हैं कि वे मामले को अभियोजित करने में युक्तियुक्त रूप से परिश्रमी थे और विलंब क्षमा के लिए यह महत्वपूर्ण परीक्षण इस मामले में संतुष्ट नहीं है।

36. उपरोक्त सभी कारणों से, यह अपील असफल होती है और एतद्वारा खारिज की जाती है। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।"

20. स्थापित विधिक स्थिति पर विचार करते हुए, मेरे मन में कोई संकोच नहीं है कि पक्षकारों के मध्य आपराधिक मामलों की पृष्ठभूमि में और भूमि की प्रकृति 'सड़क' होने के कारण, केवल यह कहकर पुनर्स्थापना आवेदन दाखिल करना कि दिनांक 26.11.2007 के आदेश की जानकारी 11 वर्षों की देरी के बाद हुई, "पर्याप्त कारण" के रूप में नहीं देखा जा सकता और यह आवेदक/याचिकाकर्ता की सदाशयता का अभाव दर्शाता है, जो राज्य को सुनने के बाद और गुण-दोष पर पारित किए गए आदेश को पुनः उठाने की कोशिश कर रहा है, जबकि राज्य आवश्यक पक्षकार था और याचिकाकर्ता केवल तृतीय पक्षकार था।

मुद्दा संख्या 2

21. दिनांक 26.11.2007 के आदेश और दिनांक 20.9.2007 की रिपोर्ट के अवलोकन से पर्याप्त साक्ष्य मिलता है कि प्लॉट संख्या 75 का एक क्षेत्र निकालकर प्लॉट संख्या 25 में विलय किया गया था और तदनुसार प्रतिवादी संख्या 6 को पूर्वाग्रह हुआ था; जो कारण-कारण परिणाम दिनांक 26.11.2007 के आदेश के रूप में संहिता, 2006 की धारा 28 के अंतर्गत प्रतिवादी संख्या 6 के पक्ष में हुआ।

22. उपरोक्त आदेश और रिपोर्ट से यह भी स्पष्ट है कि इसे राज्य को सुनने और दिनांक 20.9.2007 की रिपोर्ट के अवलोकन के पश्चात् पारित किया गया था। अब जो प्रश्न विचार की भी आवश्यकता रखता है, वह यह है कि क्या 11 वर्षों के अत्यधिक विलंब के पश्चात् एक अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



तृतीय पक्षकार केवल यह कहकर पुनर्स्थापना आवेदन दाखिल कर सकता है कि जानकारी की तिथि बाद की थी और जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, भूमि की प्रकृति 'सड़क' होने को देखते हुए, क्या ऐसी याचना को उसके मुँह से ही स्वीकार किया जा सकता है। यह भी इस न्यायालय के पूर्ण पीठ के निर्णय, **श्रीमती शिव राजी एवं अन्य बनाम उप-निदेशक चकबंदी एवं अन्य (1997 आरडी 562)**, का उल्लेख करना उपयोगी होगा, जहाँ यह पाया गया था कि एक बार विपरीत पक्षकारों (राज्य/गाँव सभा) को नोटिस की तामील के बाद गुण-दोष पर आदेश पारित हो जाने पर, स्मरण/पुनर्स्थापना के आवरण में आवेदन प्राधिकारियों के समक्ष नहीं चल सकता। राज्य/गाँव सभा कार्यवाही से पूरी तरह अवगत था और यहाँ तक कि याचिकाकर्ता जो स्वयं को उसी गाँव का निवासी बताता है, वह यह नहीं कह सकता कि जबकि वर्ष 2007 में ही सड़क का क्षेत्र घटाया गया था, उसे जानकारी नहीं थी और अचानक जब पक्षकारों के मध्य आपराधिक विवाद उत्पन्न हुआ, तो उसे दिनांक 26.11.2007 के आदेश के बारे में सूचना दी गई और इस प्रकार तृतीय पक्षकार के रूप में उसने स्मरण आवेदन दाखिल किया।

23. राजस्व परिषद ने दिनांक 4.11.2025 के अपने आदेश द्वारा पुनरीक्षण स्वीकार करते हुए वर्ष 2007 से विद्यमान स्थिति को अस्थिर कर दिया है और प्रतिवादी संख्या 6 को अब एकदम नए सिरे से कार्यवाही का सामना करना पड़ रहा है। पुनर्स्थापना/स्मरण के आवेदन की आड़ में दशक पहले पारित पूर्व आदेश की पुनरीक्षा की अनुमति नहीं दी जा सकती; क्योंकि प्रतिवादी संख्या 6 को गंभीर पूर्वाग्रह होगा। स्मरण आवेदन के गुण-दोष पर केवल तभी विचार किया जा सकता था, जब दिनांक 26.11.2007 के आदेश को वापस बुलाने के लिए आवेदन दाखिल करने में 11 वर्षों के अत्यधिक विलंब का "पर्याप्त कारण" और पर्याप्त स्पष्टीकरण देने का निष्कर्ष दिया जाता, जो न तो याचिकाकर्ता के और न ही राज्य के किसी भी पुनर्स्थापना आवेदन से सिद्ध हो सकता है।

24. उपरोक्त के मद्देनजर, मुझे यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि पूर्वाग्रह का सिद्धांत वर्तमान मामले के तथ्यों पर पूर्णतः आकर्षित होता है। यह कम अवधि या कुछ दिनों के विलंब का मामला नहीं है, जिसके लिए उदार दृष्टिकोण उचित होता और इस प्रकार मुद्दा संख्या 2 प्रतिवादी संख्या 6 के पक्ष में निर्णीत किया जाता है। एक बार दिनांक 26.11.2007 का आदेश गुण-दोष पर पारित हो जाने के बाद, तथ्य-अन्वेषण रिपोर्ट प्राप्त करने और राज्य को सुनने के पश्चात्, प्रतिवादी संख्या 6 के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही में उसके विरुद्ध पक्षपातपूर्ण व्यक्ति की ओर से आवेदन, उदार दृष्टिकोण को उचित नहीं ठहरा सकता, क्योंकि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



यह दूसरे पक्ष को गंभीर रूप से पूर्वाग्रहित करता है और परिसीमा विधि को कार्यवाहियों को समाप्त करने के लिए पढ़ा जाना है।

मुद्दा संख्या 3

25. यह भी स्वीकृत तथ्य है कि याचिकाकर्ता और प्रतिवादी संख्या 6 के मध्य विभिन्न आपराधिक मुकदमेबाजियाँ विद्यमान हैं और अचानक जब उक्त विवाद पक्षकारों के मध्य उठा, तो प्रतिवादी संख्या 6 को जानकारी प्राप्त होती है कि दिनांक 26.11.2007 के आदेश को चुनौती दी जाए, एक निस्तारित स्थिति को अस्थिर करते हुए। उक्त पृष्ठभूमि में, यह नहीं कहा जा सकता कि एक पक्षकार जिसने अपने लंबे समय की निष्क्रियता के कारण अपना अधिकार खो दिया है, उसे सुना जाए और तकनीकी विचारों के मुकाबले मूल न्याय को प्राथमिकता दी जाए। जब विलंब क्षमा की अपील हो, चाहे वह निजी वादकारी के आग्रह पर हो या राज्य के, विलंब को परिसीमा प्रारंभ होने की तिथि से, उसकी समाप्ति तक, स्पष्ट किया जाना होगा। यह सिद्धांत कि जानकारी की तिथि, यदि पर्याप्त रूप से अभिकथित हो और मामले के तथ्यों से सिद्ध हो सके, विलंब क्षमा के लिए पर्याप्त स्पष्टीकरण है और आवेदक को जानकारी की तिथि से पूर्व की अवधि का स्पष्टीकरण देना आवश्यक नहीं है, वर्तमान मामले के तथ्यों में लागू नहीं किया जा सकता; क्योंकि किसी पक्षकार का आचरण, व्यवहार और दृष्टिकोण उसकी निष्क्रियता या लापरवाही से संबंधित, वर्तमान मामले के तथ्यों में वांछित पाया गया है। यह न्यायालय जब दोनों पक्षकारों के संबंध में न्याय के तुला के पलड़े को तौलता है, तो पाता है कि प्रतिवादीगण निस्तारित स्थिति में हैं और कोई अन्य ग्रामीण उक्त निस्तारित स्थिति को विवादित करने के लिए आगे नहीं आया है, किंतु याचिकाकर्ता को छोड़कर, जो स्वीकृत रूप से हित का टकराव रखता है और प्रतिवादी संख्या 6 के साथ कानूनी लड़ाई में संलग्न है।

26. उपरोक्त के मद्देनजर याचिकाकर्ता का आचरण गंभीर रूप से प्रश्नवाचक है और इस प्रकार जानकारी की तिथि, विलंब क्षमा के लिए और "पर्याप्त कारण" न देने के लिए पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं हो सकती। जहाँ तक राज्य का संबंध है, वे संहिता, 2006 की धारा 28 के अंतर्गत कार्यवाही में पक्षकार थे जो दिनांक 26.11.2007 के आदेश में परिणत हुई और इस प्रकार उनका यह स्पष्टीकरण कि जब शिकायत की गई तो उन्हें दिनांक 26.11.2007 के आदेश की जानकारी हुई, फिर से स्वीकार नहीं किया जा सकता।

निष्कर्ष:-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



27. यह अब रेस इंटेगरा (पूरी बात) नहीं है कि विलंब क्षमा के लिए आवेदन पर विचार करते समय, न्यायालय असीमित और अनिर्बंध विवेकाधीन शक्ति का उपभोग नहीं करते। सभी विवेकाधीन शक्तियाँ, विशेषकर न्यायिक शक्तियाँ, विधि के ज्ञात युक्तियुक्त सीमाओं के भीतर प्रयोग की जानी होती हैं। विवेक का प्रयोग कारणों से सुसूचित व्यवस्थित ढंग से किया जाना है। मनोभाव और कल्पनाएँ; पूर्वाग्रह या पूर्वाग्रह विवेकाधीन शक्ति के प्रयोग का आधार नहीं बन सकते और न ही बनने चाहिए। यह सार्वजनिक कल्याण के लिए है कि मुकदमेबाजी की एक सीमा निर्धारित की जाए और एक बार उक्त सीमा से अधिक हो जाने पर वादकारी के पक्ष में कुछ सकारात्मक अधिकार प्राप्त हो जाते हैं, जिन्हें केवल "पर्याप्त कारण" दिखाकर ही भंग किया जा सकता है और दिया गया स्पष्टीकरण इन कसौटियों पर जाँचा जाना होगा:-

- (1) विलंब क्षमा की अपेक्षा रखने वाले पक्षकार पर आरोपणीय सदाशयता का अभाव।
- (2) विलंब क्षमा के लिए उदार, व्यावहारिक, न्यायोन्मुखी, अपेक्षित दृष्टिकोण का उपयोग अन्याय को वैध बनाने के लिए नहीं किया जा सकता।
- (3) कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता, किंतु अधिवक्ता या वादकारी की ओर से घोर लापरवाही पर ध्यान दिया जाना है।
- (4) अत्यधिक विलंब के मामलों में पूर्वाग्रह के सिद्धांत को देखा जाना है और यह देखना है कि क्या किसी शरारत की कोशिश की जा रही है, जिसके लिए पक्षकार का आचरण व्यवहार और दृष्टिकोण भी देखा जाना है।
- (5) स्पष्टीकरण को प्रत्येक मामले के तथ्यों में देखा जाना है और केवल किसी विशेष जानकारी की तिथि पर जोर देने से आवेदक को परिसीमा की तिथि से, आवेदन की वास्तविक दाखिल तिथि तक, स्पष्टीकरण देने से राहत देने का आधार नहीं बन सकता।
- (6) धोखाधड़ी, मिथ्या व्याख्या एक अपवाद हो सकती है, किंतु उसे ठोस साक्ष्य द्वारा स्थापित करने के अधीन। राज्य या सार्वजनिक निकाय या सामूहिक कारण का प्रतिनिधित्व करने वाली इकाई को कुछ स्वीकार्य छूट दी जा सकती है, किंतु उससे पहले तथ्यात्मक विवाद की सूक्ष्मता से जाँच की जानी है और इसे नियमित ढंग से अनुमत नहीं किया जा सकता।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



28. वर्तमान मामले में चूँकि प्लॉट संख्या 25 एक सड़क से संबंधित है और दिनांक 26.11.2007 के आदेश द्वारा प्रतिवादी संख्या 6 को एक अधिकार दिया गया है, यह नहीं माना जा सकता कि वह उक्त सड़क पर अपने अधिकार का प्रयोग नहीं कर रहा था और इस प्रकार केवल इस कथन पर कि जानकारी की तिथि बाद में प्राप्त हुई, विलंब माफ नहीं किया जा सकता।

29. मैंने दिनांक 4.11.2025 के आक्षेपित आदेश का भी अवलोकन किया है। यह स्वीकृत है कि आदेश एकपक्षीय आदेश नहीं था और दिनांक 26.11.2007 के आदेश के पारित होने से पहले रिपोर्टें माँगी गई थीं और जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, रिपोर्ट ने स्पष्ट रूप से कहा था कि प्लॉट संख्या 75 का एक क्षेत्र निकालकर प्लॉट संख्या 25 में विलय किया गया था। दिनांक 26.11.2007 का आदेश गुण-दोष पर आदेश था और प्रभावित पक्षकारों को सुने बिना, केवल माँग करने पर, इसे वापस नहीं बुलाया जा सकता था, क्योंकि अधिकार पहले से ही परिपक्व हो चुके थे और एक दशक से अधिक समय से प्रतिवादी संख्या 6 द्वारा उनका प्रयोग किया जा रहा था। राजस्व परिषद ने भी यह निष्कर्ष दिया है कि पुनर्स्थापना आवेदन/धारा 5 आवेदन में दिनांक 26.11.2007 के आदेश को वापस बुलाने के लिए 11 वर्षों के विलंब का कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है जो प्रभावित पक्षकारों को सुनकर गुण-दोष पर पारित आदेश था।

30. न्यायालय इस तथ्य के प्रति भी सचेत है कि याचिकाकर्ता और प्रतिवादी संख्या 6 के मध्य लंबी मुकदमेबाजी है और इस प्रकार याचिकाकर्ता के आग्रह पर किए गए आवेदन पर निस्तारित स्थिति को भंग नहीं किया जा सकता था और भूमि की प्रकृति "सार्वजनिक सड़क" होना, जो लंबे समय से उपयोग में है, भी एक न्यूनकारी कारक है। दिनांक 19.4.2023 का आदेश भी गुण-दोष पर आधारित नहीं था और इस प्रकार राजस्व परिषद द्वारा पारित दिनांक 4.11.2025 के आदेश में कोई त्रुटि नहीं पाई जा सकती। दिनांक 19.4.2023 के आदेश के अवलोकन से यह भी प्रतीत होता है कि बिना कोई कारण दर्ज किए और एक संक्षिप्त आदेश पारित कर, पुनरीक्षण स्वीकार किया गया है।

31. सर्वोच्च न्यायालय ने सुरेंद्र कुमार जैन बनाम सांतो भाई एवं अन्य(2025 आईएनएससी 230:मनु/एससी/0226/2025 के मामले में अभिनिर्धारित किया है कि कारणों का अभिलेखन, प्रत्येक मामले के तथ्यात्मक आव्यूह पर विचार करने के पश्चात्, सिने कुआ नॉन (अनिवार्य शर्त) sine qua non है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



32. उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों के मद्देनजर, याचिकाकर्ता को कोई राहत नहीं दी जा सकती, क्योंकि मुझे रिट याचिका में कोई गुण-दोष नहीं दिखता और तदनुसार खारिज की जाती है। तथापि, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

33. निर्णय को पूर्ण करने से पूर्व, मैं अपनी रिसर्च एसोसिएट, सुश्री प्रतिभा वर्मा के शोध कार्य में उनकी कुशलता तथा इस निर्णय का मसौदा तैयार करने में उनके उत्कृष्ट सहयोग के लिए उनकी सराहना करना चाहूँगा।

(सिद्धार्थ नंदन, न्यायमूर्ति)

13 जनवरी, 2026

पीयूष

Translated Version, Not For Legal Use.